सामाजिक बहिष्कार को समाप्त करने के वादे को पूरा करने के लिए

राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में दलित एजंडे की समीक्षा

वादा न तोड़ो अभियान
अप्रैल 2007

सामाजिक बहिष्कार की समाप्ति के लिए

राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में दलित एजंडे की समीक्षा

वादा न तोड़ो अभियान

अप्रैल 2007

सामाजिक बहिष्कार को समाप्त करने के वादे को पूरा करने के लिए – राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में दलित एजंडे की समीक्षा (अप्रैल 2007)

प्रकाशक–
वादा ना तोड़ो अभियान
राष्ट्रीय सचिवालय, सी–1/ई, द्वितीय तल, ग्रीन पार्क विस्तार, नई दिल्ली–110016, भारत, दूरभाष–91-11-46082371.
फैक्स नं. – 91-11-46082372 ई-मेल-info@wadanatodo.net वैबसाइट- www.wadanatodo.net

***वादा ना तोड़ो अभियान* गरीबी, सामाजिक बहिष्कार और भेदभाव को खत्म करने के वादे पर सरकार को जिम्मेवार ठहराने की राष्ट्रीय पहलकदमी है।**

यह अभियान विश्व सामाजिक मंच 2004 (मुंबई) में भाग लेने वाले उन मानवाधिकार कार्यकर्ताओं और सामाजिक एक्शन समूहों से पैदा हुआ जिनके बीच इस बार पर आम सहमति थी कि भारत में रह रहे दुनिया के एक चौथाई गरीब शिक्षा, जीवन और काम के अवसरों से वंचित हैं और अभाव का जीवन जीने को मजबूर हैं, और इनकी जिन्दगी बदलने के लिए ताकतवर, केंद्रित और एकाग्र प्रयत्नों की जरूरत है।

हम इसके लिए सरकार द्वारा संयुक्त राष्ट्र (यू.एन.) सहस्त्राब्दि घोषणा (2000), राष्ट्रीय विकास लक्ष्य और राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम (2004-2009) में तय लक्ष्यों को हासिल करने के लिए जीवनमान, स्वास्थ्य और शिक्षा के अधिकार पर विशेष जोर देते हुए किए गए वादों की निगरानी करेंगे।

वादा ना तोड़ो अभियान यह सुनिश्चित करने का काम करता है कि दलितों, आदिवासियों, घुमंतू जनजातियों, महिलाओं, बच्चों, युवाओं, भिन्न प्रकार से सक्षम और एच.आई.वी.–एड्स पीड़ित लोगों की चिंताएँ और आकांक्षाएँ सरकार के कार्यक्रमों, नीतियों और विकास लक्ष्यों में स्थान पा सकें। हम भारत के 15 राज्यों में 900 से ज्यादा उन अधिकार समूहों के नेटवर्क का प्रतिनिधित्व करते हैं, जो रणनैतिक उपादियता पर सामाजिक एक्शन समूहों और नीति निर्माताओं को जोड़ने के लिए इकट्ठा हुए हैं।

आप भी हमारे काम का हिस्सा इस प्रकार से बन सकते हैं–

– समूहों को सक्रिय करके और हमारे मुख्य मुद्दों पर सूचनाओं का प्रसार करके और सामूहिक एक्शन में भाग लेकर
– उन नीतियों और कार्यक्रमों पर सूचनाएँ देकर जिनकी निगरानी वादा ना तोड़ो अभियान कर रहा है।
– हमारे राज्य नेटवर्क और भागीदारों की कार्यवाहियों में भाग लेकर
– मीडिया से तालमेल बैठाने में हमारी मदद करके और हमारी गतिविधियों के लिए संसाधन जुटाकर
– हमारी वैबसाइट www.wadanatodo.net के जरिए अभियान के सदस्य बनाकर

वादा ना तोड़ो अभियान के अन्य प्रकाशन–

- अधिकारों का संरक्षण– सहस्त्राब्दि विकास लक्ष्य पर नागरिक रिपोर्ट, सितंबर 2005
- राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम की दूसरी नागरिक समीक्षा रिपोर्ट, मई 2006
- एन.आर.ई.जी.ए.– एक स्रोत पुस्तक, नवंबर 2006
- जनादेश– एन.आर.ई.जी.ए. पर राष्ट्रीय अधिकरण के निष्कर्ष, दिसंबर 2006
- नौ मेरा है– स्वास्थ्य और शिक्षा के लिए सकल घरेलू उत्पाद का 9%, (पुस्तिका), जनवरी 2007
- लैंगिकता और शासन– राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के महिला मुद्दों की समीक्षा, मार्च 2007

प्रस्तावना

वादा न तोड़ो अभियान भारत के 15 राज्यों में सक्रिय 900 से ज्यादा संगठनों के प्रयासों प्रतिनिधित्व करता है जो सरकार को संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दि घोषणा, राष्ट्रीय विकास लक्ष्य और राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में गरीबी और सामाजिक बहिष्कार खत्म करने के अपने वादे के प्रति दायित्व का अहसास कराते हैं।

वादा ना तोड़ो अभियान ने अपनी शुरुआत से ही दलितों को एक महत्वपूर्ण समुदाय के रूप में मान्यता दी है। अपनी स्थापना के तुरंत बाद इसने जो पहली जन कार्यवाही आयोजित की गई। तभी से अभियान का फोकस रहा है कि दलितों की चिंताओं और नजरिये को अपने सभी कदमों में शामिल करे, और इसका इस बात पर निरंतर जोर रहा है कि दलितों के सरोकारों को गरीबी और शासन की जवाबदेही को संबोधित क्षेत्रीय और वैश्विक प्रयासों की रणनीतियों और निष्कर्षों का केन्द्र बनाया जाए।

यह रिपोर्ट राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के जीविका, शिक्षा और बजटीय संसाधनों के अहम मुद्दों पर केंद्रित दलित एजंडे की स्थिति पर ध्यान आकर्षित करती है। रिपोर्ट स्पष्ट रूप से बताती है कि 'वादे काफी नहीं हैं' और यदि संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन सरकार हाशिए के लोगों के जनमत को पूरा करना चाहती है, जिनके दम पर वह 2004 में सत्ता में आई है, तो उसे दलितों के पक्ष में जोरदार और निर्णायक कदम उठाने पड़ेंगे।

अशोक भारती (नेशनल कान्फ्रेंस ऑफ दलित ऑर्गेनाइज़ेशन) और पॉल दिवाकर (नेशनल कैम्पेन और दलित मानवाधिकार) ने राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में संबोधित मुख्य चुनौतियों पर गंभीर और गहरी टिप्पणियाँ कर समीक्षा का तेवर तय कर दिया है।

इस आकलन को महत्वपूर्ण मुद्दों के मूल्यांकन द्वारा आगे बढ़ाया गया है। अनिंदो बनर्जी (प्रैक्सिस) और अशोक भारती ने संयुक्त रूप से राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम के क्रियान्वयन की दलित नजरिए से समीक्षा की है। समान शिक्षा का लक्ष्य और सर्व शिक्षा अभियान की एनी नामला (आई.आई.डी.एस) द्वारा समीक्षा की गई और सेंटर फॉर बजट एंड गवर्नेंस एकाउंटेबिलिटी द्वारा विशेष अवयव योजना और बजटीय संसाधनों का विश्लेषण किया गया।

यह प्रकाशन महान नेता और दूरदर्शी डॉ० बाबासाहेब अंबेडकर की 116वीं जयंती पर निकाला जा रहा है जो 14 अप्रैल को आती है और यह सरकार और सिविल समाज के लिए एक स्मरण पत्र है कि दलितों, भारतीय राष्ट्र और मानवता के लिए तय सामाजिक न्याय के एजंडे को पूरा करना हमारा ऐतिहासिक कर्तव्य है।

वादा ना तोड़ो अभियान, अप्रैल 2007

''सरकार को निर्णायक कदम उठाने की जरूरत है''

अशोक भारती[1] (नैक्डोर)

14वें लोकसभा चुनावों के बाद सता में आए संप्रग सरकार के राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में छह बुनियादी सिद्धान्त है, पाँचवें सिद्धान्त अनुसूचित जाति-जनजाति, अन्य पिछड़ा वर्ग और धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए अवसर की, विशेष रूप से शिक्षा और रोजगार में समानता की, बात करता है।

हालाँकि इसका मतलब यह नहीं है कि दूसरे पाँच सिद्धान्त दलितों, आदिवासियों और अन्य अल्पसंख्यकों के बारे में बात नहीं करते, चूँकि सरकार विशेष अवयव योजना के सिद्धान्त को स्वीकार करती है, अतः दलितों के अधिकार इन सभी सिद्धान्तों में अंतर्निहित और मौजूद मानने चाहिए, अन्तर-मंत्रालय कार्यबल की रिपोर्ट राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के कई प्रावधानों को उजागर करती है जो दलितों से विशेष रूप से सम्बद्ध है। इसमें शामिल हैः–

(क) भोजन सुरक्षा

- भोजन और पोषण की सुरक्षा के लिए व्यापक मध्यावधि रणनीति
- देश के निर्धनतम और पिछड़े खण्डों में सार्वजनिक वितरण प्रणाली (पीडीएस) को मजबूत करना और सबसे ज्यादा वंचित और बीमार तक अनाज पहुँचने के लिए विशेष योजनाएँ बनाना।
- खाने की कमी वाले इलाकों में खाद्य बैंकों की स्थापना और भूख के जोखिम वाले सभी घरों को अंत्योदय कार्ड

(ख) जमीन और जीविका

- संप्रग (संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन) राज्यों से आग्रह करेगा कि जंगलों में काम करने वाले कमजोर तबके के सभी लोगों को तेंदू पते समेत छोटे जंगल उत्पादों पर स्वामित्व प्रदान करने वाले कानून बनाएँ।
- पदोन्नति समंत सारे आरक्षण कोटे को समयबद्ध प्रक्रिया द्वारा भरा जाए, आरक्षण को विधिवत बनाने के लिए आरक्षण अधिनियम लाया जाए।
- दलितों और आदिवासियों के स्वामित्व वाली छोटी जोतों का व्यापक राष्ट्रीय कार्यक्रम बनाया जाए।
- भूपरिसीमन और भूमि के पुनर्वितरण द्वारा भूमिहीनों को भूमि दी जाए। भूपरिसीमन कानून को पलटने की अनुमति न होच।
- संप्रग निजी क्षेत्र में आरक्षण समेत सकारात्मक कार्य के मुद्दे पर संवदेनशील है, सभी दलों, उद्योगों और अन्य संगठनों के साथ राष्ट्रीय संवाद चलाया जाए ताकि पता चले कि अनुसूचित जाति-जनजाति के युवाओं की आकांक्षाओं को निजी क्षेत्र कैसे सबसे अच्छे ढंग से पूरा सकता है।

एक पक्षीय वादे

विशेष अवय योजना के अन्तर्निहित के सिद्धान्त के विपरीत हम पाते हैं कि राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में दलितों के लिए किए वादे संप्रग के मुख्य कार्यक्रमों और कदमों में शामिल नहीं है और इस तरह वे इनके क्रियान्वयन के लिए अपेक्षित तन्त्र और संसाधनों से इन्हें वंचित करते है।

[1] अशोक भारती नेशनल कांफ्रेंस ऑफ दलित ऑर्गेनाइजेशंस के राष्ट्रीय संयोजक हैं, 2001 में बने नैक्डोर में भारत भर के 300 से ज्यादा जमीनी दलित संगठन हैं, नैक्डोर विश्व सम्मान मंच का संस्थापक और 'वादा न तोड़ो अभियान' का मुख्य सहयोगी है, यह विश्व सामाजिक मंच, गरीबी के लिए दुनिया की पुकार और संयुक्त राष्ट्र सहस्राब्दि अभियान से नजदीक से जुड़ा है।

उदाहरण के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारन्टी अधिनियम–सरकार का संकेतक कार्यक्रम–मैं दलितों की भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए विशेष हवाला या रणनीति नहीं है अगस्त से नवम्बर 2006 तक भारत के छह राज्यों में चली रोजगार अधिकार यात्रा का अनुभव बताता है कि नरेगा के बारे में बुनियादी जानकारी तक दलित लोगों तक नहीं पहुँची है, तो जॉब कार्ड जारी होने और पर्याप्त मजदूरी मिलने का तो सवाल ही पैदा नहीं होता, दलित जमीनों की सिंचाई का प्रावधान भारत निर्माण–ग्रामीण पुनर्विकास का अन्य संकेतक कार्यक्रम, और राष्ट्रीय शहरी नवीकरण मिशन जैसी योजनाएँ शहरी जमीन की हदबन्दी को खत्म करती हैं जो सामाजिक कार्यकर्ताओं के अनुसार शहरी गरीबों के जिनमें अधिकांश दलित है, जमीन हासिल करने को प्रतिकूल रूप से प्रभावित करेगी।

संप्रग के मुख्य नीतिगत कदमों को विकसित करने के लिए जो विशेषज्ञ समिति बनाई गई है–जैसे राष्ट्रीय ज्ञान आयोग और राष्ट्रीय सलाहकार परिषद–उनमें एक भी दलित व्यक्ति नहीं हैं, मई 2006 में (जब राष्ट्रीय सलाहकार परिषद काम कर रही थी) राष्ट्रीय सलाहकार परिषद ने 21 बैठकें की, 21 प्रैस विज्ञप्तियाँ जारी की, 37 संकल्पनात्मक पर्चे विकसित किए और सरकार को 29 सन्देश जमा किए, इनमें से एक में भी दलित मुद्दे या सरोकार नहीं थे।

यहाँ तक की मानवाधिकारों के घोर उल्लघंन जैसे खैरलाजी का कत्लेआम और हिंसा की घटनाएँ, जिन्होंने पिछले साल महाराष्ट्र में जोरदार आन्दोलन पैदा किया था, सरकार के लिए काफी नहीं थे कि वह दलित समुदायों की सुरक्षा, सम्मान और अधिकारों के बुनियादी मुद्दों पर ध्यान देती और उनके लिए कदम उठाती।

वादों को साकार करने के लिए विशेष प्रयास

यदि सरकार दलितों से किए वादों के प्रति गम्भीर है तो उसे दलितों की विशेष योजनाओं और कदमों तथा राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के मुख्य धारा के कार्यक्रमों–दोनों में विशेष प्रयास, संसाधन और प्रावधान सुनिश्चित करने की जरूरत है।

ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना के दृष्टिकोण पर्चे को 9 दिसम्बर 2006 को अनुमोदित करते हुए राष्ट्रीय विकास परिषद में प्रधान मन्त्री ने अपने भाषण में किए वादे के बावजूद हाशिए के समूहों , 22.5 प्रतिशत दलित और आदिवासी तथा 52 प्रतिशत पिछड़े वर्गों के लिए बजट में मात्र 3.08 प्रतिशत का प्रावधान किया, इसी प्रकार आरक्षण कानून और दलितों के लिए निजी क्षेत्र में आरक्षण के पक्ष में भरपूर शोर शराबे के बावजूद, इसे व्यवहार में लाने के लिए मन्जिल अभी बहुत दूर है।

आज के समय की जरूरत है कि सरकार दलितों और हाशिए के लोगों के पक्ष में सख्त कदम उठाए, यह दलितों के अस्तित्व का सवाल नहीं खुद सरकार के अस्तित्व का सवाल है जिसे दलितों और हाशिए के लोगों के जीन का बेहतर बनाने के बादे के दम पर ही सदा सौंपी गई है।

आर्थिक भेदभाव को दण्डनीय बनाया जाए

पॉल दिवाकर (एनसीडीएचआर)[2]

संप्रग सरकार के राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में जमीन, जीविका और शिक्षा के बारे में किए वादों को पूरा कर दलितों के विकास में बुनियादी रूकावटों में से कुछ को दूर करने की क्षमता है। हालाँकि जाति के आधार पर ऐतिहासिक रूप से विभाजित भारतीय समाज के बारे में दलितों को उनके हक सुनिश्चित करने के लिए सरकार को नीतिगत वादों से आगे बढ़कर कड़े उपाय करने की जरूरत है।

इस संबंध में, एससी/एसटी (अत्याचार निवारण) अधिनियम के अनुभवों से सीखने की जरूरत है। कानून के रूप में इसके देर से–1995 में–आने और इसे प्रभावशाली ढंग से लागू करने में आई कठिनाइयों के बावजूद, आज यह एकमात्र कानून है जो दलितों के साथ भेदभावों के प्रति संरक्षण प्रदान करता है।

अधिकारों को प्रवर्तनीय बनाएँ

आज भी यह सच है कि दलित जब भी विकास के नए हस्तक्षेपों का हिस्सा बनना चाहता है–यहाँ तक कि सिंचाई के लिए नई नहरों का इस्तेमाल करना चाहता है तो उसकी जिंदगी खतरे में पड़ जाती है, अतः दलितो को लक्षित कोई भी प्रावधान राजनीति चाहत के आधार पर नहीं बनाया जा सकता, इसके पीछे कड़े सुरक्षा उपाय और प्रवर्तनीय नियम होने चाहिए।

उदाहरण के लिए, समान अवसर अधिनियम की तरफ बढ़ना जिसमें दलितों को राष्ट्र के औपचारिक कार्यबल में शामिल करना और निजी क्षेत्र में आरक्षण लागू करना, स्वागत योग्य कदम है, हालाँकि कानून के प्रावधानों के व्यवहार में लाने को सुनिश्चित करने के लिए हमारे लिए यह जरूरी है कि शिक्षा, अवसरों की सूचना तक पहुँच, आवेदनों की समीक्षा, काम में विकास और नेतृत्व के अवसरों के लिए भर्ती आदि के स्तर पर दलितों के बहिष्कार पर नजर रखें। हर स्तर पर जाँच-संतुलन परिभाषित और प्रत्येक स्तर पर लागू होना चाहिए और विभिन्न चरणों में दलितों से भेदभाव या न चुने जाने को लापरवाही से लेने के बजाय दंडनीय अपराध बनाया जाए।

अतीत में हमारी अधिकांश शक्ति भेदभाव के सामाजिक और सांस्कृतिक पहलू को परिभाषित करने और उस पर हमला करने में लगती थी, जबकि आज की जरूरत भेदभाव के आर्थिक और राजनीतिक पहलू के खिलाफ इसी तरह की लड़ाई चलाने की है, यानी मानवाधिकारों को बड़े नजरिए से देखना और तदनुसार अपनी रणनीति और कार्यों को निर्धारित करना महत्त्वपूर्ण है।

दलितों को जमीन और रोजगार का अधिकार पर फोकस करना इसी प्रयास का हिस्सा है। बहुसंख्यक दलित भूमिहीन मजदूर या एक एकड़ से भी कम जमीन वाले छोटे किसान हैं, इस स्थिति के बावजूद सरकार निगमों, निजी संस्थानों और कॉलोनी निर्माताओं को वितरण के लिए भूमि का अधिग्रहण करने के स्थान पर दलितों और अन्य भूमिहीन गरीबों को आर्थिक सुरक्षा प्रदान करने के लिए भूमि पुनर्वितरण हेतु भूमि का अधिग्रहण करे।

रोजगार तय करने में जाति संबंधों का वर्चस्व इस बात से जाहिर होता है कि केंद्र सरकारी नौकरियों में 70% दलित सफाई कर्मी के रूप में हैं, दूसरी और निजी क्षेत्र के दलितों के लिए बंद हैं जहाँ वे बाजार की शक्ति का–चाहे मामला जमीन का हो या श्रम, पूँजी या सेवा का हो–मुकाबला करने में सक्षम नहीं हैं।

[2] पॉल दिवाकर राष्ट्रीय दलित मानवाधिकार अभियान के संयोजक हैं, एनसीडीएचआर 'अस्पृश्यता' और 'जातीय भेदभाव' को खत्म करने की बड़ी लड़ाई का एक हिस्सा है जिससे आज भी भारत में 16 करोड़ दलित जूझ रहे हैं।

संसाधनों के लिए दावा करना

पिछले कुछ बरसों से हम दलितों के लिए बजटीय प्रावधानों की अपनी माँग पर ध्यान केंद्रित किए हुए हैं, यहाँ तक कि विशेष अवयव योजना (जिसे बाद में अनुसूचित जातियों के लिए उप योजना या एसपीएसपी कहा गया) भी जनसंख्या के अनुपात में संसाधन आबंटन के सिद्धांत की रूपरेखा पेश करता है, 2004-05 में एससीएसपी कुल राज्य योजना खर्च दलितों की 16.2% जनसंख्या (2001 की जनगणना के अनुसार) के लिए मात्र 12.62% था। 2006-07 में केन्द्र सरकार के कुल योजना खर्च का मात्र 4.25%[3] दलितों के लिए था।

दलितों के विकास पर बल देने वाला शासन एजेंडा तैयार करने पर ज़ोर देने की आवश्यकता है। इसमें मौजूदा नीतियाँ और कार्यक्रमों जैसे राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में दलितों के नज़रिए से समीक्षा करना और इसके लिए खास माँगों के लिए दबाव बनाना शामिल है।

सरकार को यह जानना जरूरी है कि उसके अपने कदमों जैसे 'राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन' और 'सर्व शिक्षा अभियान' द्वारा तय लक्ष्यों को हासिल करना भी तब तक संभव नहीं होगा जब तक कि इस बात पर ध्यान न दिया जाए कि प्रसूति और शिशु मृत्यु दर और सूचीबद्ध होने से संबंधित मामलों में दलितों की स्थिति बेहद खराब है।

यदि दलितों को गरीबी और बहिष्कार की बेड़ियों से मुक्त करना है तो शिक्षा, सम्पति और क्षमता निर्माण के संसाधनों और कार्यक्रमों में बढ़ोतरी करना अनिवार्य है, हमारी कई पुरानी लम्बित माँगें जो राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम से सम्बन्धित भी हैं इस प्रकार है।

- 'दलितों के लिए शिक्षा आयोग' का केन्द्र और राज्य स्तर पर गठन
- 'महिला स्वास्थ्य रक्षा वैधानिक आयोग' जिसका विशेष जोर दलित महिलाओं पर हो का गठन
- दलित महिलाओं को कम से कम 5 एकड उपजाऊ जमीन उसके नाम पर पंजीकृत, उपलब्ध कराने को एक लक्षित कार्यक्रम
- असंगठित क्षेत्र के लिए, जिसमें अधिकतर दलित महिलाएँ काम करती हैं, राष्ट्रीय श्रम नीति को अंगीकृत करना और
- निजी क्षेत्र में दलितों को रोजगार के अम्बेडकर सिद्धान्त को लागू करना।

[3] स्रोतः सेंटर फॉर बजट एंड गवर्नेंस एकाउंटेबिलिटी।

एनआरईजीए का एक साल—क्या दलित आज कुछ बेहतर हैं?

अनिंदो बनर्जी[4] अशोक भारती[5] के योगदान से

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी अधिनियम (जिसे यहाँ नरेगा कहा जाएगा) को जो फरवरी, 2006 से लागू हुआ, भारत सरकार के गरीबी दूर करने के लक्ष्य से किए गए सांकेतिक हस्तक्षेप के रूप में देखा जाता है। अपने लागू होने के दिनों से ही इसके माँग पर रोजगार देने के वादे और समय पर रोजगार न दे पाने पर मुआवजा देने के कारण इसका बड़ा आशापूर्ण स्वागत किया गया। सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह कि इस योजना के लिए मात्र 2006-07 में 16, 419 करोड़ रुपए का प्रावधान किया गया था और इसने खेती के बुर्जुआकरण के संकट, विनाशकारी विपदाओं और लाभकारी जीविका की बेहद कमी से प्रभावित गरीब समुदायों तक अतिसक्रिय पहुँच के सुनहरी मौके को पेश किया।

दलितों के गरीबी से सबसे ज्यादा पीड़ित होने के कारण नरेगा की सफलता लाखों दलितों के बुरी हालात वाले जीवन में सार्थक बदलाव लाने की क्षमता पर ही टिकी है।

यह लेख नरेगा की पहुँच के अहम मुद्दों और दलितों के संबंध में इसके क्रियान्वयन और इसके प्रभावों के आरंभिक रुझानों की जाँच करेगा।

एन.आर.ई.जी.ए. क्या वादा करता है?

* प्रत्येक ग्रामीण घर को 100 दिन का वयस्क रोजगार, एक तिहाई मजदूर महिलाएँ हों
* काम का पंजीकरण ग्राम पंचायत/ब्लॉक कार्यक्रम अधिकारी के जरिए होगा और 'जॉब कार्ड' का प्रावधान।
* आवेदन प्राप्त होने के 15 दिन में ग्राम पंचायत/ब्लॉक कार्यक्रम अधिकारी द्वारा काम का आबंटन।
* राज्य में ग्रामीण कामगार पर लागू वैधानिक न्यूनतम वेतन का भुगतान।
* यदि आवेदन के 15 दिन के भीतर काम न दिया गया हो तो बेरोजगारी भत्ता।
* काम के जरिए गरीबों में टिकाऊ सम्पदा और जीविका का आधार विकसित करना।
* ठेकेदार द्वारा काम की इजाजत नहीं।

उत्कृष्टता का विरोधाभास

ग्रामीण विकास मंत्रालय की एक रिपोर्ट (देखें तालिका 1) के अनुसार राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी योजना के तहत भारत भर में 16 मार्च, 2007 तक पैदा किए 70 करोड़ 10 लाख रोजगार दिनों में से लगभग एक-चौथाई अनुसूचित जातियों के हिस्से में आए।

पंजाब, हरियाणा, उत्तर प्रदेश और तमिलनाडु ने नरेगा के तहत अनुसूचित जातियों को 55-70% काम देकर अधिकतम अवसर दिया है। दूसरी तरफ, गुजरात, राजस्थान और त्रिपुरा जैसे राज्यों में अनुसूचित जातियों को राज्य में उनकी जनसंख्या के अनुपात में काम नहीं दिया गया, इसी प्रकार मध्य प्रदेश और छत्तीसगढ़ में, जहाँ सबसे ज्यादा रोजगार दिन पैदा किए गए, उन राज्यों में दलितों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में (दलितों को क्रमशः 16.76 प्रतिशत और 12.85 प्रतिशत का प्रावधान है) काम नहीं दिया गया।

यह देखते हुए कि योजना पात्रता के लिए गरीबों और गैर-गरीबों में, दलितों और गैर-दलितों में फर्क नहीं करती, वहाँ दलितों को रोजगार के लिए शामिल किए जाने को राज्य की समान विकास के प्रति निष्ठा का अच्छा सूचक मानना चाहिए। यह जानते हुए कि योजना को, उन समुदायों तक जो गरीबी से बुरी तरह प्रभावित हैं, विस्तारित करने और गरीबी की अच्छी समझ ने होने के कारण अन्य जन समुदायों की तुलना में दलितों से व्यवहार और योजना को निर्धनतम उप समूहों तक पहुँचने के अवसर के रूप में इस्तेमाल करने की निष्ठा में कमी को दूर करने की तत्काल आवश्यकता है।

[4] प्रैक्सिस से संबद्ध-इंस्टीटयूट ऑफ पार्टीसिपेटरी प्रैक्टिसेज़ और वादा न तोड़ो अभियान

[5] नेशनल कान्फ्रेंस ऑफ दलित ऑर्गेनाइजेशन्स

तालिका 1 : एन.आर.ई.जी.ए. द्वारा उपलब्ध कराए रोजगार में अनुसूचित जातियों का समावेश				
राज्य	उपलब्ध कराए रोजगार व्यक्ति दिनों की कुल संख्या	अनुसूचित जातियों को उपलब्ध कराए रोजगार व्यक्ति दिन		कुल जनसंख्या में अनु. जातियों का अनुपात (2001)
	(लाखों में)	(लाखों में)	%	अनु.जाति %
आंध्र प्रदेश	548.23	**166.18**	30.31	**16.19**
अरुणाचल प्रदेश	4.53	—	—	**0.56**
असम	471.97	**42.58**	9.02	**6.85**
बिहार	297.24	**138.86**	46.72	**15.72**
गुजरात	84.57	**5.62**	6.65	**7.09**
हरियाणा	19.66	**11.59**	58.95	**19.35**
हिमाचल प्रदेश	17.34	**5.17**	29.82	**24.72**
जम्मू कश्मीर	9.65	**0.63**	6.53	**7.59**
कर्नाटक	182.22	**51.91**	32.88	**16.20**
केरल	10.85	**2.04**	18.80	**1.81**
मध्य प्रदेश	1590.73	**266.66**	16.76	**15.17**
महाराष्ट्र	221.01	**43.67**	23.43	**10.20**
मणिपुर	8.26	—	—	**2.77**
मेघालय	2.01	—	—	**0.84**
मिजोरम	2.37	—	—	**0.03**
नागालैंड	11.82	—	—	**0.00**
ओडीसा	623.61	**151.53**	24.18	**16.43**
पंजाब	13.48	**9.44**	70.03	**28.85**
राजस्थान	912.79	**142.57**	17.16	**17.16**
सिक्किम	2.01	**0.02**	2.00	**5.02**
तमिलनाडू	151.18	**82.79**	54.76	**19.00**
त्रिपुरा	45.74	**7.84**	17.14	**17.37**
उत्तर प्रदेश	617.64	**351.21**	46.86	**21.15**
पश्चिम बंगाल	280.18	**86.86**	30.19	**23.02**
छत्तीस गढ़	531.49	**68.27**	12.85	**11.61**
झारखंड	308.14	**74.17**	14.07	**11.84**
उत्तरांचल	30.05	**7.63**	25.39	**17.87**
कुल	**7010.64**	**1734.76**	**24.74**	**16.20**

एन.आर.ई.जी.ए. के तहत हक–नकारने के अनगिनत तरीके

वादा न तोड़ो अभियान द्वारा भारत सामाजिक मंच और पीएसीएस में नवंबर, 2006 को नरेगा पर राष्ट्रीय अधिकरण के आयोजन के दौरान सैंकड़ों दलित कामगारों ने कई घटनाएँ बताई जब उन्हें नरेगा के तहत काम के उनके हक से वंचित किया गया।

उदाहरण के लिए अनिता देवी, बिहार के पूर्वी चंपारन जिले की भूमिहीन मुसहर महिला, ने बताया कि किस तरह उनके गाँव में लोगों के सितंबर, 2006 में धरना देने के बाद ही उनके जाँच कार्ड जारी किए गए। हालाँकि, सितंबर में अधिकारिक रूप से काम के लिए आवेदन के बावजूद उसे नवंबर के दूसरे हफ्ते तक काम नहीं दिया गया, और यह सब 'बेरोजगारी भत्ते' के महत्त्वपूर्ण प्रावधान का मखौल उड़ाते हुए जिसके अनुसार यदि कामगार को माँग करने के 15 दिन के भीतर न मिल पाए तो उसे दैनिक बेराजगारी भत्ता दिया जाएगा। सच तो यह है कि नरेगा अधिकरण में एक भी कामगार ऐसा नहीं था जिसे एक दिन के लिए भी बेरोजगारी भत्ता दिया गया हो। रोजगार अवसर में अनियमितताओं की विभिन्न घटनाएँ दलित कामगारों द्वारा अधिकरण में बताई गई।

सामान्य शिकायतें इस प्रकार थीं–1. बेहद कम जॉब कार्ड जारी करना, 2. कार्ड जारी करने में अनावश्यक देरी, 3. जॉब कार्डों में आवश्यक सूचनाओं जैसे रोजगार प्रावधान का दिन, देय मजदूरी आदि का अभाव, 4. कार्ड/फोटो जारी करने में रिश्वत माँगना, 5. काफी पहले माँग करने के बावजूद रोजगार देने में काफी देर करना, 6. कम मजदूरी का भुगतान करना, 7. काम किए दिनों की संख्या को कम लिखना और तदनुसार कम मजदूरी देना, 8. बेरोजगारी भत्ते का भुगतान न करना। खास बात यह है कि अधिकरण में शामिल किसी भी पंचायत ने 50 से ज्यादा जॉब कार्ड जारी करने की बात नहीं की। देशभर में पंचायतों में यह आम बात है कि सुपरवाइजर और इंजीनियर काम की मात्रा में कमी का बहाना बनाकर कामगारों को कम मजदूरी का भुगतान करें, जिससे दलित समुदाय के कामगार बुरी तरह प्रभावित होते हैं क्योंकि उनके पास जमीन या आमदनी के दूसरे साधनों की कमी होती है।

सीमित पहुँच बनाम भूख और तबाही के मुख्य स्थल

नरेगा की शुरुआत से देश में भूख से मरने की कई घटनाएँ घटी हैं जिनमें अधिकतर दलित हैं। कई मामला में, जैसे बिहार के दरभंगा जिले की सुप्रिया देवी के मामले में, जिसने भूख से दम तोड़ने से पहले इस योजना के तहत 40 दिन काम किया, जो इस योजना के प्रशासकों की हाशिए के लोगों के प्रति भेदभाव का ठेठ उदाहरण है जिसके चलते मजदूरी के भुगतान में घातक देर की गई। अखिल भारतीय खेती मजदूर एसोसिएशन द्वारा अगस्त 2006 में दिल्ली में आयोजित जन सुनवाई में सुप्रिया देवी की मृत्यु की काफी चर्चा और भर्त्सना की गई, उसी समय संसद का शीतकालीन सत्र भी चल रहा था। फिर भी दुर्भाग्य से, सुप्रिया देवी की मृत्यु भी योजना के लाभों के भुगतान के बारे में जल्द कदम उठाने की जरुरत का अहसास नहीं करवा पाई। और आज तक नरेगा बिहार की अधिकतर पंचायतों में शुरू तक नहीं हुआ है। रोहतास जैसे कई स्थानों से उन लोगों की भूख से मौत की इसी प्रकार की कई घटनाएँ सामने आई हैं जिनमें वैध जॉब कार्ड बन जाने के बाद भी नरेगा से उन्हें कोई काम नहीं मिला। कई राज्यों, जैसे झारखंड, ओडीसा और बिहार, के विपदाग्रस्त क्षेत्रों में, जहाँ राज्य जॉब कार्ड जारी करने का काम गाँव के कुछ घरों के देने के नाम मात्र के काम से आगे नहीं बढ़ा, दलित समुदाय के अधिकतर लोगों का बहिष्कार, भयावह है।

विषमजातीय समुदायों में गैर-दलितों द्वारा धोखाधड़ी

नरेगा की पहुँच के संबंध में दलित समुदायों से संबंधित एक आपत्तिजनक बात यह है कि जिन इलाकों में दलित सामाजिक रूप से प्रभावशाली जातियों के साथ रहते हैं वहाँ गैर-दलितों द्वारा दलितों के रोजगार अवसरों के साथ धोखाधड़ी की जाती

है। उदाहरण के लिए, राजस्थान के करौली जिले में बदनपुरा जैसे गाँवों में प्रभावशाली वर्गों के लोग सरपंच पर दबाव डाल कर नरेगा के तहत दलित कामगारों द्वारा कमाए मजदूरी में से जबर्दस्ती हिस्सा वसूल लेते हैं। फलस्वरूप दलित समुदाय का एक भी कामगार अकुशल कामगार को दिए जाने वाले न्यूनतम मजदूरी को ले नहीं पाया है।

हकों के दावे और हासिल करने की घटनाएँ

कई जगहों पर, दलित समुदाय और उनके संगठनों ने नरेगा के तहत अपने हकों के नकार के खिलाफ जबर्दस्त विरोध किया। दलित विरोध की महत्त्वपूर्ण घटनाओं में से एक नागफना (जिला बोलनगीर, ओडीसा) की है जिसमें सैंकड़ों कामगार कानूनन मजदूरी का भुगतान न करने के विरोध में हड़ताल पर गए। कामगारों ने दावा किया कि तय काम के अलावा प्रत्येक अतिरिक्त काम करने पर सानुपातिक मजदूरी का भुगतान किया जाना चाहिए। और वे तब तक काम पर नहीं लौटे जब तक कि ठेकेदार उनकी उचित मजदूरी देने के लिए तैयार न हो गए। आगे चल कर, कामगारों ने गाँव स्तरीय समितियाँ खुद-ब-खुद बनाईं, जो पंचायत द्वारा सीधे दिए गए काम सहित रोजगार गतिविधियाँ तथा गाँव की अन्य योजनाओं संबंधी सभी संबंधित दस्तावेजों और मास्टर रोल की प्रतियाँ रखती थीं। इसी प्रकार के विरोध विल्लुपुरम (तमिलनाडु) में भी हुए जहाँ दलितों ने राज्य सरकार द्वारा तय न्यूनतम मजदूरी से कम होने से इन्कार कर दिया।

2006 के दौरान, नेक्डोर–दलित संगठनों का राष्ट्र स्तरीय सम्मेलन–के बैनर तले भारत के विभिन्न राज्यों में महत्त्वपूर्ण अभियान चलाया गया, जिसका उद्देश्य नरेगा के बारे में जागरूकता फैलाना औन अनियमितताओं का पर्दापाश करना था। इस संबंध में नेक्डोर की गतिविधियाँ में रोजगार अधिकार यात्राएँ, जन अधिकरण और सरकारी मशीनरी से सीधी बातचीत शामिल है।

रोजगार अधिकार यात्रा, मध्य प्रदेश (16-31 अक्तूबर, 2006)

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजागार गारंटी अधिनियम के बारे में जागरूकता लाने और भागीदारी बढ़ाने के लिए मध्य प्रदेश के 18 जिलों में रोजगार अधिकार यात्रा आयोजित की गई। इस यात्रा ने नरेगा के लाभों को हासिल करने में लोगों खासकर दलितों के सामने आने वाली कठिनाइयों को जगजाहिर किया।

जॉब कार्ड हासिल करने की प्रशासनिक प्रक्रिया काफी धीमी है और मजदूरी के भुगतान में भी काफी देर की जाती है। अधिनियम के प्रावधानों के अनुसार हाशिए के और दलित किसानों की जमीन में सुधार और परिस्थितिकीय नजरिए से व्यवहारिक ढाँचे के निर्माण ने अभी प्राथमिकता हासिल नहीं की है। कामगारों को जरूरी औजारों और बालबाड़ी की समस्याओं से वंचित रखा जाता है और ठेकेदारों का इस्तेमाल किया जाता है। जो नरेगा के प्रावधानों का सीधे-सीधे उल्लंघन है।

रोजगार अधिकार यात्रा का समापन जन जागृति सभा और मध्य प्रदेश विधान सभा के सामने बड़े जलूस से हुआ। प्रतिनिधिमंडल ने मुख्यमंत्री से मुलाकात की और नरेगा के प्रभावी क्रियान्वयन के लिए सुझावों का एक ज्ञापन सौंपा। इसमें नरेगा के क्रियान्वयन के लिए सिफारिशों में पंचायती प्रतिनिधियों का प्रशिक्षण, निर्वाचित दलित और आदिवासी प्रतिनिधियों का प्रशिक्षण और काम के अभाव में मुआवजे का प्रावधान शामिल था।

स्रोत–नेशनल कांफ्रेंस ऑफ दलित ऑर्गेनाइजेशंस (नेक्डोर)

कार्यक्रम के मुख्य निहितार्थ

सामाजिक कारणों में बहिष्कार की आशंकाओ के शिकार दलितों को सकारात्मक रूप से लक्षित करने और उन सभी पंचायतों के लिए, जहाँ दलित समुदाय बसते हैं, योजना के तहत दलितों को शामिल करने की सूचना देने को अनिवार्य बनाने की जरुरत है। इसी प्रकार भूख, कुदरती आपदाओं और महामारी को, जो अधिकतर दलित समुदायों के साथ जुड़ी होती हैं, जान-बूझकर लक्षित करने की जरूरत है।

दलितों को शामिल कराने के लिए सकारात्मक कार्यवाही की केवल स्पष्ट रूप से अभिमुख नीति ही नरेगा जैसी योजना को गरीबी कम करने में मदद दे पाएगी। योजना को दलित कामगारों को प्राथमिकता देकर, दलित बस्तियों के पास काम देकर, अधिक संख्या में समुदाय के प्रशांसकों/निगरानी करने वालों को तैनात करके दलितों और गैर-दलितों के बीच के अन्तर को दूर करने के अवसर के रूप में देखा जाना चाहिए।

एन.आर.ई.जी.ए. पर राष्ट्रीय अधिकरण के निष्कर्ष

10 नवंबर, 2006 को नरेगा के अपने अनुभवों को प्रतिनिधित्व करने वाले 14 राज्यों के 1000 से ज्यादा लोग दिल्ली में इक्ट्ठा हुए और सबसे ज्यादा हाशिए के लोगों के नजरिए से इस कार्यक्रम के मूल्यांकन में अपना योगदान दिया। यह जमाव छह घंटे तक रहा और इसने निर्णायक मंडल–जिसमें के.आर. वेणुगोपाल, पूर्व आईएएस अधिकारी, प्रधानमंत्री के पूर्व सचिव और विशेष रिपोर्टर, राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग तथा एनी राजा–महासचिव, नेशनल फेडरेशन ऑफ इंडियन वीमैन (एनएफआईडबल्यू) थे–के सामने अपने मुख्य निष्कर्षों को रखा।

निर्णायक मंडल ने माना कि नरेगा के क्रियान्वयन में संयुक्त प्रगतिशील गठबंधन ने राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्याक्रम के जरिए लोगों से किए वादों को पूरा करने के लिए सबसे ज्यादा महत्त्वपूर्ण कदम उठाए हैं। देश में नरेगा को सफलतापूर्व लागू करना सुनिश्चित करने के लिए सिविल सोसाइटी समूहों में भी काफी उम्मीद है साथ ही वे इसके लिए उल्लेखनीय प्रयास और ऊर्जा लगा रहे हैं।

निर्णायक मंडल ने नोट किया कि सभी राज्यों से हाशिए के प्रत्येक समूह से बहिष्कार की खबरें मिल रही हैं जो कार्यक्रम को सबसे ज्यादा जरूरतमंदों–गरीबों में भी गरीबों तक पहुँचाने के लिए सरकारी एजेंसियों और सिविल सोसाइटी संगठनों के बीच केंद्रित प्रयासों की तात्कालिक जरूरत को रेखांकित करती है। सरकार को नरेगा में अनुसूचित जाति, महिलाओं और समाज के हाशिए के दूसरे लोगों को शामिल करने के लिए उद्देश्यपूर्ण प्रयास करने चाहिए। इस प्रावधान कि एक घर से एक ही व्यक्ति को काम मिलेगा, के कारण रोजगार के लिए महिलाओं को समान अवसर से वंचित कर दिया गया है। और यह इस कार्यक्रम की कमजोर कड़ी है।

कार्यक्रम के माध्यम से निर्धारित मजदूरी –60 रु. प्रतिदिन–को अपर्याप्त माना गया तथा 120 से 130 रु. की दिहाड़ी की सिफारिश की गई ताकि एक परिवार अपनी भोजन, कपड़े, घर, शिक्षा और स्वास्थ्य की बुनियादी जरुरतों को पूरा कर पाए।

निर्णायक मंडल ने निष्कर्ष निकाला कि नरेगा को सफल बनाने के लिए कड़ी राजनीतिक इच्छाशक्ति और योग्य प्रशासन की जरूरत है। सिविल सोसाइटी संगठनों की इस उद्देश्य को मजबूती देने के लिए जनमत तैयार करने और इसकी वकालत करने की भूमिका को और दृढ़ता देने की जरुरत है।

सर्व शिक्षा अभियान के जरिए दलित बच्चों के लिए सार्वभौमिक आरम्भिक शिक्षा को सुनिश्चि करना

ऐनी नमला[6]

हमारी रोजमर्रा की जिंदगी में जाति एक सक्रिय भूमिका अदा करती है। इसे अनदेखा करके हम उन अवरोधों को मजबूत करते है जो विकास कार्यक्रमों और सेवाओं में दलित बच्चों और समुदायों की भागीदारी और उनके अधिकार प्रयोग को रोकते हैं, जो इन कार्यक्रमों और सेवाओं की दोषपूर्णता को बढ़ाते हुए दलितों और अन्य समाज समूहों के बीच असमानताओं को बढ़ाते हैं। इस प्रकार हम जातिगत भेदभाव उन्मूलन की हमारी तंत्र को सुधारने के अवसर से हाथ धो बैठते हैं। हम दलितों के विकास के लिए समुत्थानशील और साझेदारी बढ़ाने वाली दलित यांत्रिकी को भी स्वीकार नहीं कर पाते हैं यह पर्चा सर्वशिक्षा अभियान कार्यक्रम में दलित बच्चों ही खास चिंताओं पर केन्द्रित है। इसमें सर्वशिक्षा अभियान के बेहत्तर क्रियान्वयन की मौजूदा सिफारिशों पर भी बातचीत की गई है।

दलित बच्चों का शिक्षा अधिकार

दलित बच्चों के शिक्षा अधिकार की सुरक्षा की खास जरूरत को भारतीय संविधान के अनुच्छेद 46 में दर्शाया गया है। यह बताता है कि ''सामान्य तौर पर, राज्य जनता के कमजोर तबकों के शैक्षिक और आर्थिक हितों को खास ध्यान देकर बढ़ावा देगा और विशेष तौर पर, सामाजिक अन्याय और सभी तरह के सामाजिक शोषणों से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों की सुरक्षा करेगा।''

अनुच्छेद 15 (4) में सकारात्मक भेदभाव के लिए राज्य मूलभूत प्रतिबद्धता को रेखांकित करता है। अनुच्छेद 21 ए, 6-14 वर्ष के उम्र-समूह के सभी बच्चों के लिए मुफ्त और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करने की बात करता है। भारत में इस उम्र समूह के बच्चों की कुल संख्या 21-68 करोड़ है। इसमें लगभग एक चौथाई बच्चे अनुसूचित जाति/दलित समुदायों के हैं।

इन प्रावधानों की बात नीति कथनों में भी दिखाई पड़ती है। राष्ट्रीय शिक्षा नीति 1986/1992, इस बात पर जोर देती है कि सामाजिक और क्षेत्रीय असंतुलन को सही करने में, औरतों के सशक्तिकरण में और उपेक्षितों और अल्पसंख्यकों को उपयुक्त स्थान दिलाने में शिक्षा को एक सकारात्मक और हस्तक्षेपकारी भूमिका अदा करनी चाहिए। संयुक्त प्रगतिशील गठबन्धन के राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम के छह मूल सिद्धांतों में से एक ''अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन-जातियों, अन्य पिछड़ी जातियों और धार्मिक अल्पसंख्यकों के लिए खास तौर पर अवसरों में पूरी समानता'' को अपना उद्देश्य बताता है। मानव संसाधन विकास मंत्रालय कहता है कि ''राष्ट्र सभी के लिए शिक्षा मुहैया कराने के लिए पूरी तरह से प्रतिबद्ध है। इसमें विशेष आवश्यकताओं वाले बच्चों समते सभी को मुफ्त और अनिवार्य प्राथमिक शिक्षा, असाक्षरता उन्मूलन, व्यवसायिक शिक्षा, महिमा समानता के लिए शिक्षा, और अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जन जातियों और अल्पसंख्यकों पर खास ध्यान देने वाली शिक्षा आदि प्राथमिकता क्षेत्र हैं''[7]।

दलितों के लिए मुफ्त शिक्षा, पाठ्य पुस्तकों और वर्दियों की मुफ्त आपूर्ति, और छात्र-वृत्तियों और आरक्षण की बात करने वाल सुस्पष्ट प्रावधान शिक्षा से उनके प्रतिबंधों और बहिष्कार के लंबे इतिहास की क्षतिपूर्ति करने वाले प्रावधान है। दलितों और अन्य सामाजिक समूहों के बीच के अंतर को कम करने और समान अवसरों व समान कार्य अवसरों की बात करने वाल उद्देश्य इन कार्यक्रमों के घोषित उद्देश्य हैं।

सर्व शिक्षा अभियान

सर्व शिक्षा अभियान 2001 में शुरू किया गया। यह अभियान 6 से 14 वर्ष उम्र-समूह के सभी बच्चों के लिए आरम्भिक शिक्षा को पहुंचाने का मुख्य वाहक और ध्वजपोत कार्यक्रम है। यह अभियान केन्द्र और राज्य सरकारों का एक साझा कार्यक्रम है। इसका लक्ष्य है—गुणवत्ता पूर्ण शिक्षा का ध्यान रखते हुए सामुदायिक स्वामित्व के दृष्टिकोण के जरिए स्कूली व्यवस्था में बदलाव लाना सर्व शिक्षा अभियान एक निश्चित समय-सीमा के भीतर पूरा होने वाला मिशन है। इसका उद्देश्य है—2007 तक प्राथमिक शिक्षा और 2010 तक आरम्भिक शिक्षा का सर्वव्यापीकरण करना, 2010 तक सभी सामाजिक और लैंगिक अन्तरों को समाप्त करना। मिशन का ध्यान पूरी तरह से लड़कियों की शिक्षा पर केन्द्रित है। साथ ही, शिक्षा गारन्टी योजनाओं और वैकल्पिक व नवोन्मेषी कार्यक्रमों के जरिए स्कूल विहीन आबादियों और स्कूल से बाहर रह गए बच्चों तक लचीली शिक्षा प्रदान करने पर भी इसका पूरा ध्यान है ताकि कोई भी बच्चा शिक्षा की पहुंच से बाहर न रह जाए।

सर्व शिक्षा अभियान के तहत खासतौर पर दलित बच्चों के लिए प्रावधान

- लड़कियों पर, खास तौर पर अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति समुदायों और अल्पसंख्यक समूहों की लड़कियों पर खास ध्यान।
- लड़कियों अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति बच्चों के लिए मुफ्त पुस्तकें।
- लड़कियों, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति बच्चों के लिए विशेष कोचिंग/सहायक कक्षाएँ और अनुकूल शिक्षा परिवेश।
- शिक्षा के समान अवसरों को बढ़ावा देने के लिए शिक्षकों को संवेदनशील बनाने वाले कार्यक्रम।
- स्कूल में समुदायिक हिस्सेदारी और सामुदायिक स्वामित्व।
- लड़कियों की शिक्षा, अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति बच्चों से सम्बन्धित नवोन्मेषी परियोजनाओं पर विशेष ध्यान।
- 5 फीसदी अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति आबादी वाले और 1991 की जनसंख्या सूचकांक में 10 फीसदी से एक अनुसूचित जाति /अनुसूचित जनजाति महिला साक्षरता दर वाले खण्डों (Blocks) में एन.पी.ई.जी.एल. लागू करना।

क्या दलित बच्चों और अभिभावक शिक्षा के आकांक्षी है?

मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार के आँकड़े बताते है कि पिछले वर्षों में दलित बच्चों की स्कूल प्रवेश दर में लगातार बढ़ोत्तरी हुई है। 2004-05 में अस्थायी प्रवेश पर 98.8 प्रतिशत थी और 1989-90 की 80.8 प्रतिशत दर के मुकाबले इसमें 18 प्रतिशत की बढ़ोतरी हुई। 2004-05 में प्राथमिक स्कूलों में दलित बच्चों की प्रवेश दर 115.3 प्रतिशत थी।[8] यह बढ़ोत्तरी पूरे देश में दलित बच्चों और उनके अभिभावकों की उस आकांक्षा का पर्याय है जो शिक्षा को सामाजिक उत्थान, प्रतिष्ठा और सम्मानपूर्ण आजीविका का एकमात्र आधार के रूप में देखती है।

बहरहाल, बढ़ती प्रवेश दर के साथ-साथ स्कूल छोड़ने की समस्या भी बराबर बनी हुई है। प्रथम कक्षा में प्रवेश लेने वाले 99. 8 प्रतिशत दलित बच्चों में से पाँचवी कक्षा तक 31.47 प्रतिशत बच्चे स्कूल से बाहर हो गए। आठवीं कक्षा तक यह दर 52. 32 प्रतिशत और दसवीं कक्षा तक 8.17 प्रतिशत हो जाती है। ऐसा अनुमान है कि 6 से 14 वर्ष उम्र समूह में गैर-अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/ अन्य पिछड़ी जातियों के बच्चों (1,848, 378)[9] की तुलना में स्कूल से बाहर रहने वाले दलित बच्चों (3, 104, 866)[4] की दर 8.17 प्रतिशत है। बढ़ती प्रवेश दर के साथ-साथ स्कूल से बाहर रह जाने वाले बच्चों की समस्या भी बराबर बनी हुई है। इसके कारण शिक्षा के क्षेत्र में संख्या और गुणवत्ता दोनों में दलितों और अन्य समाज समूहों के बीच असमानता की खाई बढ़ती जा रही है। मंत्रालय स्वीकार करता है कि दलितों में स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की संख्या में कमी लाना अभी भी एक चुनौती है।

सर्व शिक्षा अभियान के क्रियान्यवयन में दिखते अन्तराल

2004-2005 में सर्व शिक्षा अभियान का मूल्यांकन करते हुए लेखा नियना एवं महालेखा परीक्षक Comptroller and Auditor General[10] ने अपनी खत में इस कार्यक्रम के क्रियान्वयन में दिखने वाले अन्रालों की तरफ ईशारा किया है। क्रियान्वयन के विविध पहलू सूक्ष्म परीक्षण की श्रेणी में रखे गए हैं।

- मंत्रालय और राज्य सरकारों द्वारा कार्यक्रम के लिए प्रदान किए गई कोषराशि कार्यक्रम अनुमोदन बोर्ड द्वारा अनुमोदित कोषराशि से बहुत कम थी।
- 110.30 करोड़ रुपए की धनराशि को विदेशी दानकर्त्ताओं से प्राप्त करने का दावा किया गया था, मगर इस बारे में दिसम्बर 2005 तक कुछ भी नहीं किया गया।
- कार्यक्रम में अप्रैल 2001 में 3.40 करोड़ ऐसे बच्चों को चिन्हित किया था जो स्कूल से बाहर थे। इन बच्चों में से 1.30 करोड़ बच्चे 11133.57 करोड़ रुपयों के खर्च के बावजूद 31 मार्च 2005 तक स्कूल से बाहर ही थे।
- समुदायिक स्वामित्व और हिस्सेदारी इस कार्यक्रम की दो ऐसी विशेषताएँ हैं जो इससे पहले के कार्यक्रमों इसे विशेष बनाती हैं। मगर समुदायिक सहभागिता तैयारी चरण और सूक्ष्म योजना कई राज्यों में काफी कमजोर थे।
- एक शिक्षक पर चालीस विद्यार्थी का अनुपात होना चाहिए था मगर अधिकतम अनुपात एक शिक्षक पर तिरानवें बच्चे तक का देखा गया।
- सभी स्कूल विहीन आबादियों, मुख्यधारा में लाए जाने के लिए आवश्यक कम से कम 15 योग्य बच्चों की छोटी संख्या के लिए कार्यक्रम ने इ.जी.एस. या ए. एण्ड आई.ई. का वायदा किया था। मगर इस तरह की 31,648 (9 प्रतिशत) आबादियाँ अभी भी बिना स्कूलों के थीं।
- पाठ्यपुस्तकों की अपूर्ण और देरी से की जाने वाली आपूर्ति।
- परिसर दीवारों, शौचालयों और पानी जैसी सुविधाओं का अभाव।
- ए. एण्ड आई. ई. के अन्तर्गत प्रावधानों का कई स्थानों पर उपयोग नहीं किया गया।

इसमें कोई सन्देह नहीं है कि इन बातों ने कार्यक्रम के नतीजों को प्रभावित किया है। कार्यक्रम का क्रियान्वयन एक ऐसी जगह है जहाँ सबसे ज्यादा कमी दिखाई देतता है। कार्यक्रम में मिशन या अभियान की भावना का अभाव था जिसके चलते इसे एक रूटीन शिक्षा कार्यक्रम की तरह चलाया गया।

स्कूल से बाहर जाने वाले बच्चों को समझने में जाति आधारित भेद-भाव कोई मायने नहीं रखता।

सामाजिक एवं ग्रामीण शोध संस्थान (एस. आर. आई.) ने 2006 में सर्वे किया। यह सर्वे कभी स्कूल न आने वाले बच्चों और स्कूल छोड़ने वाले बच्चों के पीछे के कारणों को बताता है।

स्कूल में नाम न लिखने के कारण	प्रतिशत
स्कूल खर्चा नहीं उठा सकते	36.1
स्कूल नहीं जाना चाहते	16.9
स्कूल जाने के लिए छोटे हैं	14.1
काम पर जाना पड़ता है	2.9

दूसरे कारण (अभिभावक अनुमति नहीं देते, घोलू काम-काज, बच्चों की दूसरी अयोग्यताएँ)	30.0
अनुपस्थित रहने /स्कूल छोड़ने के कारण	
स्कूल जाना पसन्द नही	24.4
स्कूल नहीं जा सकते	23.9
काम पर जाना पड़ता है	6.5
पढ़ाई में अच्छे नहीं	3.1
घरेलू काम-काज करने पड़ते हैं	5.2
दूसरे कारण	38.4

कभी स्कूल में न जा पाने वाले व 45.1 प्रतिशत बच्चों की तुलना में स्कूल छोड़ने वाले बच्चों की दर 54.9 प्रतिशत थी। स्कूल छोड़ने के कारणों में स्कूलों में पिटाई, स्कूल का ऊबाऊ होना, कक्षा में दूसरे बच्चों के साथ नहीं चल पाना आदि भी गिनाए जाते हैं।

यह एक ध्यान देने वाली बात है कि स्कूल से बाहर रह जाने वाले बच्चों की एक बड़ी तादात ऐसी है जो मुस्लिम अल्पसंख्यक, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति समुदायों से सम्बन्धित है। इन बच्चों के सामाजिक बहिष्कार, भेद-भाव या अस्पृश्यता के अनुभवों से जुड़े सुस्पष्ट कारणों को सर्वे की खोजों में कहीं जगह नहीं दी गई है। यह बात दलित कार्यकर्त्ताओं और संगठनों के अध्ययनों और रपटों से एकदम उल्टी बात है।

स्कूल में जाति आधारित भेदभावों के अनुभव

सॉलिडारिटी ग्रुप फॉर चिल्ड्रन अगेंस्ट डिस्क्रीमिनेशन एण्ड एक्सक्ल्युजन (sg4CADE)[11] ने 8 राज्यों के 25 जिलों में अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति और अल्पसंख्यक समुदायों के 263 बच्चों पर एक अध्ययन कराया है। इस अध्ययन ने इन समुदायों के बच्चों को होने वाले विभिन्न भेद भाव पूर्ण और अपमान जनित अनुभवों को उजागर किया है। बच्चों द्वारा अभिव्यक्त किए गए कुछ विस्तृत क्षेत्र इस प्रकार हैः

- 22.5 प्रतिशत बच्चों ने स्कूल पहुँचने वाले रास्ते पर ऊँची जाति समुदायों की तरफ से किए जाने वाल उत्पीड़न और उन्हें रोकने जैसी समस्याओं के बारे में बताया।
- 25% बच्चों ने बताया कि यदि इन्हें देर हो जाए तो शिक्षक उन्हें कक्षा में नहीं आने देते।
- 40% बच्चों ने बताया कि देर होने पर शिक्षक या दूसरे छात्र सीट ढूँढने में उनकी मदद नहीं करते।
- 61% बच्चों ने बताया कि उन्हें कक्षा में हर कहीं बैठने की आज़ादी नहीं है।
- 21% बच्चों ने बताया कि शिक्षक उनकी अपेक्षा करते हैं और उनसे बोर्ड पर सवाल हल करने को नहीं पूछते ही वे ये भी मानते हैं कि शिक्षक प्रभावशाली जातियों के बच्चों का पक्ष लेते हैं।
- 48% बच्चों ने कहा कि शिक्षक उन्हें प्रभावशाली जातियों के बच्चों से ज्यादा पीटते हैं।
- 24% बच्चों ने कहा कि वे समूह में अपमानित किए जाते हैं जबकि 15% ने बताया कि उन्हें उनका अपमान करने के लिए जाति कम से बुलाया जाता है।

आँकड़े बताते हैं कि दलितों और हाशिए के बच्चों के जाति आधारित बहिष्कार और भेदभाव को स्वीकारने और उसे दूर करने

की जरूरत है। स्कूल में बहिष्कृत बच्चों की शिक्षा के सर्वाभौमिक और प्रतिधरण की आवश्यकता है। यह भी ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि बहिष्कृत बच्चे असल में जाति व्यवस्था और प्रभावशाली जातियों के लोगों द्वारा अपने हकों और अधिकारों को हासिल करने से जानबूझकर रोके जाते हैं।

बिहार के 7 जिलों के 193 टोलों के स्कूल छोड़े बच्चों के एक सर्वेक्षण[12] से पता चला कि 11,477 बच्चों में से अधिकतर दलित हैं और कई टोलों में 100 से ज्यादा स्कूल छोड़ बच्चे हैं।

बिहार में दलित युवाओं पर एक अध्ययन से पता चला कि गाँव के पहले ग्रजुएट को अपना छोटा जिनी स्कूल बंद करना पड़ा जो उसने गाँव में शुरू किय था क्योंकि उसके पास स्कूल चलाने वाले यादव युवाओं को यह पसंद नहीं था। वह गाँव में अपना समय खराब कर रहा था।

हाशिए के अभिभावक स्कूली प्रक्रिया से बाहर

''बैठक में आने से पहले अच्छी साड़ी पहनो और बालों में तेल लगाओ'' ये निर्देश एक छोटे लड़के ने अपनी दादी को स्कूल समिति की बैठक में आने के लिए दिए, उनके अभिभावकों की कम भागीदारी और पहलकदमी की कमी को उनमें रूचि, प्रेरणा और ज्ञान की कमी बताया जाता है, लेकिन चीजों को समझना भी जरूरी है जो उन्हें भागीदारी से रोकती हैं, एक बच्चे को स्कूल से निकालने का सटीक तरीका है कि स्कूल को उसके लिए अपमानजनक बना दिया जाए और अब भी उसके अभिभावक स्कूल आएँ उनका अनादर किया जाए, बच्चे पहले ही अपने माता-पिता की स्कूल सम्बन्धी प्रक्रिया में भाग लेने की कमियों के लिए संवेदनशील होते हैं और उनकी रक्षा और बचाव करने के लिए उन्हें स्कूल आने से रोकते हैं, जब उन्हें लाना ही पड़ता है तो कोई भी प्रतिकूल व्यवहार अकसर उन्हें स्कूल छुड़ा देता है।

गुजरात में दलित बच्चे कहते हैं कि स्कूल में होने वाले भेदभाव या अपमान को अपने अभिभावकों को बताने का कोई मतलब नहीं है क्योंकि वे उन्हें असहाय मानते हैं, पानीपत, हरियाणा की एक लड़की ने, स्कूल में दलित बच्चों के साथ भेदभाव आपत्ति किए जाने पर अपने पिता की अध्यापक और गाँव वालों द्वारा पिटाई किए जाने पर स्कूल छोड़ दिया।

कोई बहिष्कृत अभिभावकों और शिक्षकों के उनकी शिक्षा के बारे में एकदम विपरीत विचारों से हैरान हो सकता है, अभिभावक अपने बच्चों की शिक्षा के प्रति गहरा लगाव रखते हैं जबकि शिक्षक उन्हें शिक्षा में रूचि न लने वाला यहाँ तक कि अपने बच्चों के विकास का विरोधी और केवल अल्पकालिक आर्थिक लाभों के प्रति चिन्तित मानते हैं, मैं एक अभिभावक की बात से बहुत हैरान हुआ जो सरकार द्वारा मुफ्त की किताबों और छात्रवृति के प्रावधानों के बावजूद अपनी बेटी के स्कूल छोड़ने से दुःखी दिखता था, जबकि उसकी बेटी ने एक जिद्दी मौन बरकरार रखा।

जबकि सर्व शिक्षा अभियान समुदाय की भागीदारी पर निर्मित किया गया है, यह प्रक्रिया की एक कमजोर कड़ी है, और बहिष्कृत अभिभावकों की विशेष परिस्थितियाँ प्रक्रिया में उनकी भागीदारी और योगदान सुनिश्चित कराने के लिए विशेष रणनीति बनाने की आवश्यकता है, अपने बच्चों की शिक्षा में अभिभावकों की भागीदारी का कोई विकल्प नहीं है और यदि उन बच्चों के, जो स्कूल छोड़ने वालों का बहुमत हैं, अभिभावक नहीं तो फिर कौन होगा।

रास्ता क्या है

स्कूल में जाति आधारित भेदभाव को खत्म करो– इस बात की उपेक्षा करने की जरूरत नहीं है कि दलित बच्चों के लिए स्कूल अधिकांश समय सुखद नहीं रहते, हालाँकि इस मुद्दे पर किए गए अधिकांश अध्ययनों ने इस मुद्दे को रेखांकित किया है, लेकिन राज्य संस्थानों और तन्त्र को इसे अभी स्वीकारना और इसका हल ढूँढ़ना बाकी है, अब यह महत्वपूर्ण हो गया है कि सभी अध्यापकों और कर्मचारियों के जातिवादी भेदभाव और दलित बच्चों के प्रति नजरिए और बर्ताव में बदलाव लाने के लिए

अभिमुखता और संवेदनशीलता का संस्थानीकरण करने की आवश्यकता है, इस पूरी प्रक्रिया में यह भी महत्वपूर्ण है कि हम दलित बच्चों, अभिभावकों और सामुदायिक नेताओं से अपनी समझ औार रणनीति विकसित करें, दलित-गैर दलितों बच्चों के बची संवाद और स्वस्थ बहसों की भी सुनिश्चित करे ताकि प्रत्येक बच्चे में एक दूसरे के प्रति सम्मान और साथीपन की भावना विकसित हो सके, स्कूली शिक्षा के सभी पहलुओं में समावेश शिक्षा और समावेश की समान शर्ते विकसित करने की जरुरत है। भेदभाव की शिकायतों को दूर करने के लिए तन्त्र का गठन—निजी स्कूल की एक छोटी लड़की ने कहा कि जब संस्थान के अध्यक्ष ने उसकी भेदभाव की शिकायत पर उसकी शिक्षिका को फटकारा गया तो उसे और भी ज्यादा सताया गया, अतः यह महत्वपूर्ण है कि कार्यस्थल पर यौन उत्पीड़न के निवारण के लिए बनी अनिवार्य समितियों की तरह शैक्षणिक संस्थानों में भी जातिवादी भेदभाव और उत्पीड़न के निवारण के लिए अनिवार्य समितियों का गठन किया जाए।

अभिभावकों को शामिल करना और उनके साथ आदरपूर्वक व्यवहार कराना— दलित अध्यापकों और शिक्षकों के बीच मौजूदा नजरियों में बदलाव की जरूरत है, अभी गठित वीईसी का इस प्रक्रिया में कोई मतलब नहीं है क्योंकि अधिकतर स्थानों पर अभिभावक समितियाँ दलित बच्चों के मुद्दों का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं, इन समितियों में दलित प्रतिनिधियों की संख्या इतनी कम होती है कि वे अपने बच्चों की हाजिरी और स्कूल छोड़ना रोकने के लिए कुछ अभिभावकों की, एसएचजी और समुदायों के दूसरे प्रतिनिधियों सहित, बड़ी बैठकें आयोजित करने को प्रोत्साहित किए जाने की आवश्यकता है।

पाठ्यपुस्तकों में दलित संस्कृति और अनुभवों का सम्मानपूर्ण चित्रण सुनिश्चित करना—जहाँ विभिन्न सामाजिक समूह अपनी वर्चस्ववादी स्थिति के नजरिए से समाज का चित्रण करने के लिए एक-दूसरे से प्रतिद्वन्द्विता करते हैं, वहीं दलित संस्कृति और राष्ट्र में उनके योगदान के बारे में पाठ्यपुस्तकों और पाठयक्रम में बहुत कम होता है, यहाँ डॉ. बाबासाहेब अम्बेडकर और अन्य स्थानीय दलित नेताओं की जीवन कथा देना एक शुरुआत हो सकती है।

दलित बच्चों में महत्वाकांक्षाएँ और आदर्श गढ़ने के लिए अवसरों को प्रोत्साहित करना—चूँकि महत्वाकांक्षाएँ स्वयं के अनुभवों और दूसरों की अपेक्षाओं से आकार लेती हैं इसलिए दलितों में महत्वाकांक्षाओं का स्तर काफी नीचा पाया जाता है, आदर्शों की कमी, प्रभावशाली व्यक्तियों से मेलजोल के अवसरों की कमी, सम्भावनाओं और विकल्पों का बहुत सीमित होना—इन सबका नतीजा होता है निम्न महत्वाकांक्षाएँ और निष्पादन, सर्व शिक्षा अभियान ने इस तथ्य को स्वीकारा और दलित बच्चों को विकल्पों और अवसरों की व्यापक भिन्नता और प्रभावशाली व्यक्तियों से मुलाकात के अवसर इत्यादि प्रदान करने के लिए ताकि उनमें ऊँची महत्वाकांक्षाएँ जागृत हो सकें, अतिरिक्त मोड्यूल विकसित किए हैं।

तमिलनाडु में काँचीपुरम जिले में हाल के दौरे के समय मुझे यह देख कर सुखद आश्चर्य हुआ कि सभी बच्चे स्कूल में दाखिलाा लेते हैं और कम से कम प्राथमिक स्कूल पूरा करते हैं, हालाँकि अधिकतर बच्चों ने 12वीं पास करने और स्थानीय गारमेंट फैक्टरी या दूसरी छोटी कम्पनियों में 2500 से 3000 रु प्रतिमाह कमाने को सपना देखा था।

दलित बस्तियों में ईजीएस और एएंडआईई केन्द्रों की स्थापना और दलित युवाओं को प्राथमिकता के आधार पर उन्हें चलाने का अवसर देना—कोई भी जान सकता है कि राज्य द्वारा दलित बस्तियों में सार्वजनिक संरचनाएँ और संस्थान बनाने को सबसे कम प्राथमिकता दी जाती है, अतः जब अन्य सामाजिक समूहों की तुलना में कुपोषण और शिशु मृत्युदर अधिक पाई जाती है तो पता चलता है कि आइ. सी. डी. एस. केन्द्र प्रभावशाली बस्तियों में स्थित हैं और उनका बहुत ही कम इस्तेमाल होता है, जब बहिष्कृत बच्चों का स्कूल छोड़ना जारी रहता है, हम उनकी बस्तियों में स्कूल ले जाने के बदले उनसे स्कूल की दूरी कम करने की बात करते हैं, यह भी दिलचस्प है कि ईजीएस और एएंडआईई को भी कमजोर तरीके से ही लागू किया गया है, कोई नहीं जानता कि इनमें से कितने बहिष्कृत बस्तियों में हैं। उनका स्थान अधिक हाजिरी, प्रतिधारण और समुदाय स्वामित्व के एसएसए के लक्ष्य हासिल करने की कुँजी है।

सीएजी रिपोर्ट बताती है कि कार्यक्रमों में पिछले चार सालों में एनजीओं की भागीदारी कम होती जा रही है, दलित युवाओं के एनजीओ/सीबीओ को, जिन्हें मुद्दों की गहरी जानकारी और समुदाय के साथ बेहतर तालमेल होता है, केन्द्र स्थापित करने या अस्तियों में वैकल्पिक कार्यक्रम चलाने के लिए संसाधन नहीं मिल पाते, दलितों में प्राथमिक शिक्षा के सार्वभौमिकरण के लिए समुदायों के युवाओं को शामिल कर प्रक्रिया को उलटने की जरुरत है।

शिक्षा को पूर्णतः मुफ्त करना—तिलक 2000 ने आकलन किया कि एक अनुसूचित जाति घर सरकारी स्कूल में शिक्षा पर प्रतिवर्ष 303 रु खर्च करता है, यह खर्च सरकारी सहायता प्राप्त स्कूल में थोड़ा सा ज्यादा 325 रु. होता है और निजी गैर सहायता प्राप्त स्कूल में काफी ज्यादा 757 रु. होता है जो इस शिक्षा को बहुसंख्यक अनुसूचित जाति बच्चें की पहुँच से दूर कर देता है। हालाँकि मुफ्त शिक्षा की बात की जाती है, लेकिन कई छुपी लागतें होती हैं, उन्हें भी दूर कर इसे पूर्णतः मुफ्त करने की जरूरत है ताकि यह भारत के निर्धनतम बच्चे तक पहुँच जाए।

अन्त में जातिवादी बहिष्कार और भेदभावों के रास्ते में आने वाली दुविधाओं और विरोधाभासों को दूर किया जा सकता है, बाबासाहेब अम्बेडकर को इसके लिए धन्यवाद कि संवैधानिक प्रावधान इस बारे में एकदम स्पष्ट हैं, लेकिन इस कार्यक्रम को इसके उद्देश्य के अनुसार सीधे और निरन्तर लागू नहीं किया जा रहा है, इसका एक उदाहरण है बच्चों के लिए राष्ट्रीय कार्य योजना 2005 जिसमें पूरे अनुभाग बालिकाओं, कठिन परिस्थितियों के बच्चों, बाल व्यापार , बाल मजदूरी, बाल भागेदारी, यौन उत्पीड़न और बाल अश्लीलता पर हैं; यह देख कर निराशा होती है कि इसमें जातिवादी ढाँचे और इसके बड़े समुदाय पर पड़ने वाले प्रभाव का कोई विश्लेषण नहीं है, सच तो यह है कि उपरोक्त सभी अपंगताओं के भी जातिवादी असर होते हैं और उनकी कोई समझ इसमें नहीं दी गई है।

सीएजी रिपोर्ट कहती है कि इस कार्यक्रम को सभी जिम्मेदार संस्थानों और लोगों की निष्ठा को बढ़ा कर ईमानदारी से क्रियान्वित करने की जरुरत है, इस लेख में हमने अतिरिक्त सरोकारों और अन्तरालों को देखने और एसएसए की सम्भावित रणनीतियों को पेश करने की कोशिश की है ताकि दलित बच्चे हमारे देश में समान शिक्षा का लाभ उठा सकें, जातिवादी बहिष्कार और भेदभाव के असर और प्रभा को कम करके आँकना, और एसएसए के क्रियान्वयन में दलित संगठनों, कार्यकर्ताओं और अभिभावकों को शामिल न करना और दलित बच्चों को सच में शामिल न करना, इस तरह एसएसए के लक्ष्यों को हासिल नहीं किया जा सकेगा।

[6] एनी नमला इंडियन इंस्टीट्यूट ऑफ दलित स्टडीज में प्रोजेक्ट कोआर्डीनेटर हैं।

[7] वार्षिक रपट, 2005-2006, आरम्भिक शिक्षा एवं साक्षरता विभाग, माध्यमिक और उच्चतर शिक्षा विभाग, मानव संसाधन विकास मंत्रालय भारत सरकार

[8] मानव संसाधन विकार मंत्रालय, भारत सरकार

[9] सामाजिक एवं ग्रामीण शोध संस्थान की रपट; 2006

[10] लेखा अभियन्ता एवं महालेखा परीक्षक रपट संख्या-15, 2006

[11] यह उपेक्षित समुदायों के बच्चों के साथ काम करने वाले गैर-सरकारी संगठनों और आन्दोलनों का राष्ट्रीय मंच है। यह अध्ययन अगस्त 2006 में किया गया।

[12] आई.आई.डी.एस एवं दलित समन्वय द्वारा 2006 में अध्ययन

क्या दलितों को उनको देय संसाधन मिल रहे हैं?
द्वारा : सीबीजीए और एन. सी. डी. एच. आर.

2001 की जनगणना के अनुसार, भारत की कुछ जनसंख्या का 16.2 प्रतिशत अनुसूचित जाति से हैं। फिर भी यह सामाजिक गुट ऐतिहासिक तौर पर जाति पर अस्पृश्यता के नाम पर भेदभाव व बहिष्कार का शिकार रहा है। अनुसूचित जातियों के कल्याण के नाम पर योजनाओं के कई दशकों और सार्वजनिक संसाधनों के काफी मात्रा होने के बावजूद इनके वास्तविक लाभ इन तक न के बराबर ही पहुँचे। सभी मुख्य सामाजिक-आर्थिक सूचकों (जैसे, आय उत्पन्न करने वाली संपत्ति, रोजगार, गरीबी, शिक्षा, स्वास्थ्य आदि) में ये राष्ट्रीय अनुपात से काफी नीचे हैं।

इस तथ्य को देखते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गाँधी के निदेश के तहत भारत सरकार ने 1979 में छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान विशेष अवयव योजना (एससीपी) (जिसे अब बदल कर अनुसूचित जाति उप योजना या एससीएसपी का नाम दिया गया है) का सूत्रपात किया। अनुसूचित जाति की विशेष अवयव योजना से अपेक्षित था कि वह 'अनुसूचित जातियों की जनसंख्या के अनुपात में अन्य सभी विकसित क्षेत्रों में संसाधनों को एकत्र करने और उनके मिलन को तथा अनुसूचित जातियों के लाभ के लिए बने विकास कार्यक्रमों की निगरानी करने को सरल बनाए। इस रणनीति को केंद्र सरकारी मंत्रालयों के साथ-साथ राज्य सरकार के विभागों के लिए भी अनिवार्य बनाया गया।

अनुसूचित जाति उप योजना कोई पृथक कार्यक्रम या योजना नहीं है। बल्कि उद्देश्य अनुसूचित जातियोंके समग्र विकास के लिए छत्रछाया रणनीति उपलब्ध कराना है। यह रणनीति राज्य/संघ शासित क्षेत्रों की वार्षिक योजनाओं में से उस राज्य/संघ शासित क्षेत्र की कुल जनसंख्या में अनुसूचित जातियों के अनुपात में कोष और अन्य लाभों के प्रवाह को आवश्यक बनाती है।

हालाँकि एससीपी का मुख्य उद्देश्य अनुसूचित जाति का आर्थिक विकास है, यह उनकी निम्नतम जरुरतों और मानव संसाधन विकास की पूर्ति के साथ उनके शैक्षिक व सामाजिक विकास को भी प्रोत्साहित करती है। एससीपी का मुख्य उद्देश्य न केवल यह सुनिश्चित करना है कि दलितों के कल्याण के लिए पर्याप्त कोष आबंटित किया जाए बल्कि यह देखना भी है कि उस कोष का सदुपयोग हुआ है तथा स्पष्ट व लक्ष्य वाले प्रभावी और व्यवहारिक कार्यक्रमों का सूत्रपात करना भी है।

एससीपी के मुख्य अवयव[13]

एससीपी के मुख्य तत्त्व निम्नलिखित हैं–

1. इस योजना की पूरी लागत में से दलितों के कल्याण के लिए आबंटित कोष कम-से-कम उस राज्य में उनकी जनसंख्या के अनुपात में होना चाहिए।
2. एससीपी के अंतर्गत राज्य सरकार के प्रत्येक विभाग की दलितों की मुख्य जरुरतों व प्राथमिकताओं के अनुरूप अलग कार्यक्रम विकसित करने के लिए कदम उठाने चाहिए। एससीपी के तहत राष्ट्रीय आबंटन को (विशेष रूप से जैसे शक्ति, सिंचाई, शिक्षा और स्वास्थ्य क्षेत्र में) टालने की जरुरत हैं।
3. एससीपी में केवल वही कार्यक्रम जो दलितों के लिए बनाए गए हैं और सरकारी आदेश के अनुसार निश्चित प्रतिशत कोष आबंटित किया गया हो, उन्हें ही शामिल किया जाएगा।

[13] पर्चे का यह अंश सोशल वाच-तमिलनाडू (2004), "विशेष अवयव योजना-दलितों की उम्मीदों से धोखा?" द्वितीय (संशोधित) संस्करण, चेन्नई, जुलाई, 2004

4. 'प्लान-बजट लिंक' पुस्तक में अलग बजट शीर्ष दिखाए जाने चाहिए जिनमें (दलितों के लिए चिह्नित कोष के विपथन, कम उपयोग और दुरुपयोग को रोकने के लिए) स्पष्ट रूप से एससीपी की प्राप्तियों और खर्चों के विवरण को दिखाया जाना चाहिए।
5. राज्य में एससीपी के गठन और क्रियान्वयन के लिए राज्य के दलित कल्याण से जुड़े विभागों को नोडल एजेंसियों की भूमिका निभानी चाहिए।

एससीपी रणनीति को लागू करने के माध्यम के रूप में तीन मुख्य उपकरण इस प्रकार है–

1. केन्द्रीय मंत्रालयों और राज्यों के एससीपी–एससीपी में नियत लक्ष्य जिलों और क्षेत्र वार लक्ष्यों में अलग होते हैं। जिला कलक्टर एससीपी के तहत योजनाओं के क्रियान्वयन के लिए जिम्मेवार होते हैं।
2. राज्यों में एससीपी के लिए विशेष केन्द्रीय सहयोग (एससीए)–एससीए को सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय से विभिन्न राज्यों को 100% अनुदान दिया जाता है ताकि संबंधी राज्यों में एससीपी के क्रियान्वयन में किसी कमी को पूरा किया जा सके।
3. राज्यों के अनुसूचित जाति विकास निगम (एससीडीसी) या राज्य विभाग एससीपी के क्रियान्वयन में नोडल एजेंसियों की भूमिका निभाएँगे।

निर्धारण की प्रकृति

अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारण निम्नलिखित दो श्रेणियों में आता है–

1. वास्तविक निर्धारण–यह उन योजनाओं के तहत अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारण से संबंधित है जो या तो विशेष रूप से अनुसूचित जातियों के लिए बनी हों या जिनमें योजना के अंतर्गत कुल लाभ उठाने वालों में से अनुसूचित जातियों के लिए न्यूनतम लाभों के अनुपात के बारे में स्पष्ट दिशानिर्देश/ निदेश दिए गए हों।

2. कल्पित निर्धारण–अनुसूचित जातियों के लिए वास्तविक निर्धारण के विपरीत कल्पित निर्धारण, सरकारी मंत्रालयों/विभागों द्वारा योजनाओं के कुछ निर्धारण में सीधे अनुसूचित जातियों के लिए किए निर्धारण से संबंधित होता है। ये लाभ, यदि ये सीधे मंत्रालयों/विभागों द्वारा तय अनुपात में वास्तव में अनुसूचित जातियों तक पहुँचे तो वे अनुसूचित जातियों द्वारा प्राप्त वे आकस्मिक लाभ हैं जिनके लिए योजना के अन्तर्गत कोई बाध्यकारी नीतिगत दिशानिर्देश या निदेश नहीं है।

एससीपी का क्रियान्वयन–विचलित करने वाले प्रमाण

हालाँकि एससीपी का आरम्भ छठी पंचवर्षीय योजना के समय हुआ था, उन राज्यों (जैसे तमिलनाडू, आंध्र प्रदेश) के प्रमाणों से, जहाँ सिविल सोसाइटी समूह राज्य बजट में एससीपी के क्रियान्वयन पर नजर रखे हुए हैं, बड़ी विचलन कारी तस्वीर मिलती है। सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय राज्यों पर निरंतर दबाव बनाए रखता है। वे एससीएसपी के लिए पर्याप्त निर्धारण करें। प्रेरक के रूप में राज्यों/संघ शासित राज्यों को उनकी कुल जनसंख्या के अनुपात में अनुसूचित जातियों के अंक के रूप में एससीएसपी के अंतर्गत निर्धारित प्रतिशत के आधार पर विशेष केंद्रीय सहयोग का 25% जारी कर दिया जाता है।

सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय की रिपोर्ट के अनुसार एससीएसपी के तहत निर्धारण तय करने में बिहार, हरियाणा, महाराष्ट्र, तमिलनाडू और उत्तर प्रदेश जैसे राज्यों का निष्पादन अच्छा रहा है। हालाँकि अन्य राज्य/संघ शासित राज्य अनुसूचित जातियों के विकास के लिए एससीएसपी के तहत निर्धारण तय करने के मामले में कोई संतोषजनक तस्वीर पेश नहीं करते।

इसमें भी अधिक, राज्यों/संघ शासित राज्यों द्वारा दसवीं योजना के पहले तीन सालों के राज्य योजना के कुल खर्च, एससीएसपी के हिस्से के आँकड़े बताते हैं कि कुल जनसंख्या के अनुसूचित जाति के 16.23% से उनके लिए किया गया निर्धारण मेल नहीं खाता।

तालिका 1—राज्यों/संघ शासित क्षेत्रों द्वारा सूचित राज्य का कुल योजना खर्च, एससीएसपी का प्रवाह

वर्ष	राज्य का कुल योजना खर्च (करोड़ रुपयों में)	एससीएसपी खर्च	राज्य योजना के खर्च में एससीएसपी खर्च का %
2002-2003	88591.83	10177.54	11.49
2003-2004	85757.97	10373.95	12.10
2004-2005	95518.76	12057.43	12.62

पृष्ठभूमि नोट—ग्यारहवीं पंचवर्षीय योजना (2007-2012) के निर्माण के लिए कार्य समूह।

अनुसूचित जातियों के कल्याण व विकास की योजनाएँ

तालिका 2—अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए विशेष रूप से बनी योजनाएँ

विभाग/मंत्रालय	योजना	2006-07 में योजना के लिए योजना निर्धारण (करोड़ रुपयों में)	अनुसूचित जातियों के लिए नियत निर्धारण (करोड़ रुपये में)
विज्ञान व प्रौद्योगिकी मंत्रालय	अनुसूचित जातियों के विकास के लिए विशेष अवयव योजना	**2.5**	**2.5**
सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्रालय	अनुसूचित जाति अवयव योजना के लिए विशेष केंद्रीय सहयोग	440.12	440.12
	दसवीं बाद छात्रवृत्ति योजना	440	440
	सिविल अधिकार अधिनियम, 1955 और अत्याचार निवारण अधिनियम, 1989 के क्रियान्वयन के लिए तंत्र	36.91	36.91
	बालिका होस्टल	32	32
	बाल होस्टल	28	28
	अनुसूचित जातियों के लिए पूर्व-दसवीं छात्रवृत्ति योजना	16	16
	अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए स्वयंसेवी संगठनों को सहायता	30	30
	अनुसूचित जातियों के कल्याण के लिए अन्य कार्यक्रम	47.85	47.85
	अनुसूचित जातियों के लिए साझा कार्यक्रम	5.8	5.8

	राष्ट्रीय अनुसूचित जाति वित्त व विकास निगम	37	37
	राज्य अनुसूचित जाति विकास निगम	33	33
	राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी वित्त व विकास निगम	80	80
		1226.68	**1226.68**

स्रोत–विवरण 21, बजट खर्च खंड 1, केंद्रीय बजट 2006-07

2006-07 में केन्द्र सरकारी मंत्रालयों द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए तय योजना निर्धारण

तालिका 3 स्पष्ट रूप से बताती है कि अन्य मंत्रालयों/विभागों द्वारा निर्धारण बेहद कम है, केवल कुछ ही लाभ अभिमुख मंत्रालयों (जैसे सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय, मानव संसाधन विकास मंत्रालय, श्रम व रोजगार मंत्रालय, ग्रामीण विकास मंत्रालय और विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय) ने अनुसूचित जातियों के लिए स्पष्ट रूप से योजना निर्धारण किया है।

तालिका 3–2006-07 में केंद्र सरकारी विभागों/मंत्रालयों द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए एससीपी के क्रियान्वयन की स्थिति (अनुसूचित जातियों के लिए वास्तविक या कल्पित योजना निर्धारण)

विभाग/मंत्रालय	2006-07 में विभाग/मंत्रालय के लिए कुल योजना निर्धारण (करोड़ रुपयों में)	अनुसूचित जातियों के लिए नियत योजना निर्धारण (करोड़ रुपयों में)	कुल योजना निर्धारण में से अनुसूचित जातियों के लिए नियत निर्धारण का अनुपात (% में)
विज्ञान व प्रौद्योगिकी विभाग	1340	2.5	0.17
सामाजिक न्याय व अधिकारिता मंत्रालय	1750	1226.68	70.1
ग्रामीण विकास विभाग	24025.62	2286	9.51
श्रम व रोजगार मंत्रालय	311.36	0.53	0.17
महिला व बाल विकास विभाग	4795.85	635	13.2
माध्यमिक शिक्षा और उच्च शिक्षा विभाग (मानव संसाधन विकास मंत्रालय)	3616	371.2	5.9
प्राथमिक शिक्षा व साक्षरता विभाग (मानव संसाधन विकास मंत्रालय)	17128	2493.5	14.6
युवा व खेल मंत्रालय	600	16.45	2.74

हालाँकि सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय को छोड़कर उपरोक्त सभी मंत्रालयों के मामले में अनुसूचित जातियों के लिए योजना निर्धारण 16% से कम है। इससे भी अधिक, कई मंत्रालयों में तो केवल कल्पित निर्धारण है, जहाँ मंत्रालयों की नियमित योजनाओं से अनुसूचित जातियों को प्रासंगिक लाभ मिलने की बात वास्तविक लाभ उठाने वालों के ठोस आँकड़ों के बिना ही मान ली जाती है।

हम लगभग उस सभी योजनाओं में, जिनमें अनुसूचित जातियों के लिए निर्धारण स्पष्ट रूप से तय किया हुआ है, अनुसूचित जातियों वास्तविक सशक्तीकरण के बदले तुष्टिकरण के परम्परागत दृष्टिकोण को पाते है। मुख्यधारा के मंत्रालय जिन्हें देश के आर्थिक विकास के वर्तमान रास्ते से सबसे ज्यादा लाभ पहुँचा है। अनुसूचित जातियों के लिए कोई स्पष्ट निर्धारण नहीं करते हैं। अपनी योजनाओं/सेवाओं के बारे में वे इनके अविभाज्य होने का तर्क सबसे ज्यादा देते हैं और इसीलिए अनुसूचित जातियों के लिए इन मुख्यधारा के मंत्रालय द्वारा एससीपी लागू करना संभव नहीं है।

सबसे ज्यादा दुखदायी तथ्य है कि महत्त्वपूर्ण क्षेत्रों में, जो आर्थिक सशक्तीकरण के लिहाज के बहुत अहम हैं, जैसे कृषि शोध और सहाकारिता विभाग, पशु पालन, डेरी और मत्स्यपालन विभाग, सड़क परिवहन और राजमार्ग विभाग, अनुसूचित जातियों के लिए कोई ठोस योजना नहीं है। वहाँ अनुसूचित जातियों के लिए वास्तविक निर्धारण की तो बात ही क्या, कल्पित निर्धारण भी नहीं है।

तालिका 4—2006-07 में केंद्र सरकार द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए एससीपी के क्रियान्वयन की स्थिति

2006-07 में केन्द्र सरकारी विभागों/मंत्रालयों द्वारा कुल योजना निर्धारण	2006-07 में केन्द्र सरकारी विभागों/मंत्रालयों द्वारा अनुसूचित जातियों के लिए नियत योजना निधारण	कुल योजना निर्धारण में से अनुसूचित जातियों के लिए नियत निर्धारण का अनुपात (% में)
रु० 1,65,499 करोड़	रु० 7,031.86 करोड़	4.25 %

कुल मिलाकर, केंद्र सरकार के (सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय समेत) कुल चार मंत्रालय/विभाग अनुसूचित जातियों के लिए योजना निर्धारण में छोटी राशि नियत करते हैं और दूसरे तीन विभाग कल्पित योजना निर्धारण में कुछ राशि नियत करते हैं। इन योजना निर्धारणों में अनुसूचित जातियों के लिए नियत अनुपात उनके देश की जनसंख्या के अनुपात लगभग 16% से काफी कम है और जो अनुसूचित जाति के लिए एससीपी के लिए रणनीति का उल्लंघन है। अतः इस बात में जरा भी शक नहीं होना चाहिए कि अनुसूचित जातियाँ विकास प्रक्रिया से बाहर क्यों हैं। हमें यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि अनुसूचित जातियों के सशक्तीकरण के लिए जरूरी है कि आर्थिक विकास और संपदा निर्माण में उन्हें उनका देय भाग मिले।

अनुसूचित जातियो के विकास का नजरिया दान या तुष्टिकरण के बदल हक और अधिकार आधारित नजरिया होना चाहिए। इस बारे में अनुसूचित जातियों के सशक्तीकरण और विकास के मौजूदा नजरिए, रणनीति, चल रही नीतियों की प्राथमिकताओं और कार्यक्रमों तथा उनके क्रियान्वयन की व्यापक समीक्षा की बहुत जरुरत है।

हम, भारत के सिविल सोसायटी के प्रतिनिधिगण, राष्ट्रीय न्यूनतम साझा कार्यक्रम में किए गए निम्नमलिखित वायदों को वर्ष 2006–07 में पूरा करने की मांग करते हैं;

1. शिक्षा का अधिकार विधेयक, 2005 संसद में पारित करें और शिक्षा के लिए सकल घरेलू उत्पाद की 6 प्रतिशत राशि प्रदान करें।
2. सकल घरेलू उत्पाद 3 प्रतिशत स्वास्थ्य के लिए प्रदान करें साथ ही राष्ट्रीय ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन को मजबूत करें।
3. राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार गारंटी कानून में दलित, आदिवासी, महिलाओं और विकलांग तबकों की सहभागिता सुनिश्चित करें।
4. संसद में महिला आरक्षण विधेयक लागू करें।
5. अनुसूचित जनजाति (वन अधिकारों की मान्यता) विधेयक, 2005 को लागू करें और भूमि सुधार कानूनों को सुदृढ़ता से लागू करें।
6. सांप्रदायिक हिंसा विधेयक, 2005 को संशोधनों सहित लागू करें और सशस्त्र सेना विशेष अधिकार कानून को खारिज करें।
7. दलितों और आदिवासियों को निजी क्षेत्रों में आरक्षण दिलाने हेतु एक विस्तृत विधेयक तैयार करें।
8. जबरन बेदखली बंद करें और विस्थापन और प्राकृतिक आपदाओं में पूर्नस्थापन के लिए एक विस्तृत नीति सुनिश्चित करें।
9. आधारभूत सुविधाओं के निजीकरण और गरीबों के उपर सेवा शुल्क पर रोक लगाएँ।
10. विकास की प्रत्येक योजनाओं और परियोजनाओं में निर्वाचित स्थानीय निकायों (ग्रामीण और शहरी) की सहभागिता सुनिश्चित करें।

वादा न तोड़ो अभियान

सी-1/ई, ग्रीन पार्क विस्तार, नई दिल्ली-110016 भारत

दूरभाष–91–11–46082371 ■ फैक्स–91–11–46082372

info@wadanatodo.net ■ www.wadanatodo.net